सर्वहारा दृष्टिकोण

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया (कम्युनिस्ट) का मुखपत्र (पाक्षिक)

वर्ष-30 अंक-13 7 जुलाई, 2015 पृष्ठों की संख्या 4 मुख्य संपादक कॉमरेड कृष्ण चक्रवर्ती मूल्य : 1 रुपये

सरकारी प्राइमरी स्कूलों में बेरोकटोक पास करने की नीति

शिक्षा को चौपट करने की एक विनाशकारी व विभेदकारी नीति : इसका प्रतिरोध करें

भारत में स्कूली शिक्षा आजकल बिना फेल किये अगली कक्षा में चढ़ा देने की नीति(नो-डिटेंशन पॉलिसी) की चपेट में है। इस नीति को पहली से आठवीं क्लास तक पास-फेल पद्धति हटाए जाने की नीति भी कहा जाता है। हर सत्र के बाद अंतिम परीक्षा के परिणामों के आधार पर ऊँची कक्षाओं में चढ़ाने के लिए पास-फेल की पद्धति स्कूलों में पहले परम्परागत तौर पर प्रचलन में थी। इसे खत्म करने का अर्थ है छात्रों को उस सत्र में जो ज्ञान प्रदान किया गया वह उन्होंने कितने अच्छे से और पूरी तरह से हासिल किया है या वे अगली कक्षा के लिए कितने कम तैयार किये गये हैं, यह जांचे-परखे बिना ही स्वत: अगली कक्षा में चढ़ा देना। इसमें यह बात और जोड़ दी जाए कि यह उपाय या कदम केवल सरकारी स्कूलों के संदर्भ में ही है जिनमें साधारण जनता, खासकर गरीब परिवारों के बच्चे पढ़ते है। बाकी स्कूलों में, खास तौर पर निजी-व्यक्तियों के द्वारा चलाए जाने वाले स्कूलों में, जिन्हें बेहतर या सर्वोत्तम स्कूल माना जाता है, जिनमें पढ़ाई का खर्च यहां तक कि मध्यम वर्गीय परिवारों के लिए भी काफी ज्यादा बढ़ता जा रहा है, उनमें परीक्षाएं भी ली जा रही हैं और पास-फेल पद्धति को भी जरूरत और दस्तूर के मुताबिक जारी रखा जा रहा है।

देश की आजादी के बाद से शिक्षा के क्षेत्र में तथाकथित सुधारों को लागू करने के बार-बार किए गये प्रयासों के फलस्वरूप बेरोकटोक पास करने की यह नीति लाई गई। समय गुजरते-गुजरते ये सुधार शिक्षा पर लगातार बढ़ते हुए हमलों के रूप में प्रकट हुए जिनका मतलब एक तरफ शिक्षा को खासकर आम लोगों की पहुँच से ज्यादा से ज्यादा बाहर करने के साथ-साथ शिक्षा को संकुचित करना था। दूसरी तरफ इन उपायों ने गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को बुरी तरह प्रभावित किया है और शिक्षा के सार चरित्र निर्माण से इसको वंचित कर दिया गया। यह बेरोकटोक पास करने की नीति देश की समस्त स्कूली शिक्षा के लिए विनाशकारी और विभेदकारी नीति हो गई है। अंतर्विवेकशील लोगों-अध्यापकों, छात्रों, अभिभावकों, शिक्षाविदों, यहां तक कि जनसाधारण में जिनके बच्चे इस समय शिक्षा पाने के लिए लगे हुए हैं या शिक्षा प्राप्त करने में लगने वाले हैं-तेजी से रोष फैलता जा रहा है। हालात ऐसे मोड़ पर पहुँचते जा रहे हैं और इस कदम का विनाशकारी स्वरूप इस कद्र बेनकाब होता जा रहा है कि इसके लिए चाहे जो भी सफाई दी जा रही हो, बारीकी से यह देखने की सख्त जरूरत है कि यह पद्धति कैसे शुरू की गई और किसने इसकी तरफदारी की और क्यों की और किसने इस नीति के चालू किये जाने से ही इसके विनाशकारी और विभेदकारी परिणाम के खतरे को समझ कर विरोध का झण्डा उठाया था।

परीक्षा शिक्षा का एक अभिन्न अंग है : सच्चाई जिसे सरकार मानने से इन्कार कर रही है

अध्ययन-अध्यापन प्रक्रिया में परीक्षा एक अभिन्न अंग मानी जाती है। यह न केवल सीखने की प्रगति की जाँच-पड़ताल करती है, बल्कि यह भी जाँच-परख करती है और दरियाफ्त कर लेती है कि शिक्षा कहाँ तक प्रभावशाली और कार्यसाधक साबित हो रही है। यह एक अध्यापक के द्वारा अपने ही छात्रों की परीक्षा लेने का मामला हो या उससे परे, चाहे एक प्रिंसीपल या मुख्याध्यापक द्वारा शिक्षण संस्थान में दाखिला लेने वाले प्रार्थियों का साक्षात्कार या परीक्षा लेने का मामला हो; सरकार के द्वारा अध्यापकों की भर्ती के लिए परीक्षा लेने का मामला हो या उच्च शिक्षा, इंजीनियरिंग, चिकित्सा आदि के किसी कोर्स में छात्रों के दाखिले के लिए संयुक्त प्रवेश परीक्षा का मामला हो या सम्बन्धित अधिकारियों के द्वारा विदेशों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जी.आर.ई. आदि के द्वारा उपयुक्त उम्मीदवारों के चयन का मामला हो या बोर्ड बैठा कर कार्पोरेट सी.ई.ओ. का स्क्रीन टेस्ट करने अर्थात् उपयुक्त व्यक्तियों को चुनने या खारिज करने का मामला हो, सब कुछ वे उनके प्रयोजन के लिए उपयुक्त के तौर पर ले सकते हैं। अलग-अलग कोर्स की विषयवस्तु, उद्देश्य, प्रयोजन के अनुसार, परीक्षा या साक्षात्कार जिनका हो रहा हो उन लक्षित लोगों की चारित्रिक विशेषता के अनुसार, तकनीकी और बुनियादी ढांचे की उपलब्धता के अनुसार, सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश और आवश्यकता आदि के अनुसार परीक्षा भी स्वरूप और सारतत्त्व में अलग-अलग तरह की हो सकती है, लेकिन ऐसे किसी भी गंभीर प्रयास के लिए जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में किसी भी गम्भीर प्रयास के लिए परीक्षा अनिवार्य और सर्वजनीन होती है।

हालांकि केन्द्रीय या राज्य सरकारों, नीति-निर्माताओं और उनके सहायकों, सबने एक-दूसरे से मिली-भगत कर बड़े पैमाने पर और प्रभावशाली तरीके से काम करते हुए पतन की तरफ जाने का रास्ता ही चुना। जैसा कि बताया गया, स्कूलों में परीक्षा पद्धति का जीर्णोद्धार करने वाले सुधार लाने के नाम पर, वे वर्तमान पास-फेल पद्धति को बिल्कुल खत्म करने पर तुले हुए हैं जिसमें 12वीं कक्षा तक भी परीक्षा को रद्दी की टोकरी में फेंक देने के उनके प्रयास शामिल हैं। गौरतलब है कि मुख्यधारा की कोई भी संसदीय पार्टी जो सत्ता में थी या है-इसका विरोध करती दिखाई नहीं देती। मजेदार बात यह है कि पास-फेल पद्धति को समाप्त करने का पहला कदम ऐसी शक्ति के शासनकाल में हुआ जो वामपंथ की ध्वजवाहक है। पश्चिम बंगाल में 1977 में सत्ता में आने के साथ ही सी.पी.आई.(एम)-नीत वाम मोर्चा सरकार ने कुछ साल पहले कांग्रेस सरकार द्वारा गठित पाठ्यक्रम कमेटी की मीटिंग में पास-फेल पद्धति को खत्म करने

(शेष पृष्ठ 2 पर)

जनवादी आन्दोलन पर घातक प्रहार करने वाला एक और काला कानून लाने के फासीवादी कदम की एसयूसीआई(सी) ने की निन्दा

एसयूसीआई(सी) के महासचिव कॉमरेड प्रभाष घोष ने 27 जून 2015 को जारी बयान में कहा :

मीडिया में खबर आई है कि बीजेपी-नीत केन्द्र सरकार एक और काला कानून लाने जा रही है जिसमें किसी हड़ताल के दौरान सरकार को हुए नुकसान या क्षति को पूरा करने की जिम्मेदारी नेताओं या राजनैतिक पार्टियों पर आयद होगी। प्रस्तावित कानून में यह प्रावधान किया जा रहा है कि हड़ताल के दौरान सरकारी सम्पत्ति को हुए नुकसान की क्षतिपूर्ती हड़ताल या बंद का आह्वान करने वाले नेताओं से वसूल की जाएगी जो क्षतिग्रस्त सम्पत्ति की बाजार भाव से कीमत के बराबर होगी। सरकारी सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाने के अभियुक्त ऐसे नेताओं को अपनी बेगुनाही भी खुद साबित करनी होगी। बताया गया है कि कथित कानून का ड्राफ्ट मौजूदा ''प्रीवेन्शन ऑफ डेमेज टू पब्लिक प्रोपर्टी, 1984 एक्ट'' में नई धारा जोड़ कर तैयार किया गया है जिसे पहले ही राज्यों के पास उनका मतामत जानने के लिए भेजा जा चुका है।

हम ऐसे एक फासीवादी कदम की तीव्र निन्दा करते हैं जो हड़ताल के माध्यम से प्रतिवाद दर्ज कराने के जांचे-परखे तरीके को वस्तुत: प्रतिबंधित करके जनवादी आन्दोलन पर घातक प्रहार करेगा, प्रतिवाद करने के मौलिक अधिकार को छीन लेगा और विरोध की आवाज का गला घोंट देगा। हम मांग करते हैं कि सरकार ऐसा एक जनविरोधी कानून बनाने से बाज आये और लोगों से हम आह्वान करते हैं कि तत्परता से एकजुट हो जाएं और जोरदार आन्दोलन गठित करें ताकि सरकार अपना कदम वापस लेने को मजबूर हो जाए।

शिक्षा बचाओ सम्मेलन आयोजित

सोनीपत, हरियाणा : सोनीपत के जिला न्यायालय परिसर स्थित बार रूम में शिक्षा बचाओं मंच के तत्वावधान में 28 जून को शिक्षा बचाओ सम्मेलन किया गया। दिल्ली विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर नरेन्द्र शर्मा सम्मेलन के मुख्य वक्ता थे।

सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर नरेन्द्र शर्मा

शिक्षा के निजीकरण-व्यापारीकरण पर रोक लगाने, अभिभावकों पर बनाये गये झूठे मुकदमें खारिज करने, फेल व पास प्रणाली चालू करने, सीसीई वापिस लेने, शिक्षा में पीपीपी को बंद करने, एक समान शिक्षा लागू करने, शिक्षा बजट बढ़ाने आदि 17 मुद्दों पर एक प्रस्ताव सम्मेलन में सर्वसम्मति से पारित किया गया।

सरकारी प्राइमरी स्कूलों में बेरोकटोक पास नीति...(पृष्ठ 1 का शेष)

का सुझाव दिया, फिर यह फैसला लिया और अंग्रेजी पढ़ाना खत्म करने के फैसले के ठीक पीछे-पीछे अन्ततः 1982 में इस फैसले को भी लागू कर दिया। इसके साथ ही लिया। लेकिन दोनों कदम प्राइमरी स्कूलों के स्तर अर्थात् 5वीं कक्षा तक और सरकारी व सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में ही अपनाए गए। इसके एकदम बाद कांग्रेस-नीत केन्द्रीय सरकार ने पश्चिम बंगाल मॉडल का अनुसरण करते हुए इसी नीति की वकालत की, अपनाया और विस्तार दिया। राजीव गांधी-नीत कांग्रेसी शासन काल में 1986 में अपनाई गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी'86) की धारा 5(6) पृ. 11, प्रोग्राम ऑफ एक्शन की धारा 2(14) में पास-फेल पद्धति को प्राथमिक स्तर पर समाप्त करने का नुस्खा दिया गया। इसमें आठवीं कक्षा तक इसे बढ़ा दिया गया। जनमत विरोध में चले जाने के दबाव में उस समय के पश्चिमी बंगाल के मुख्यमंत्री ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि वे तो महज केन्द्र सरकार की नीति को ही लागू कर रहे थे। इसलिए यह पूरी तरह से साफ था कि केवल एक ही बैण्ड-बाजा था और एक ही बैण्ड मास्टर था; विभिन्न राज्य सरकारें अलग-अलग हाथों से उसी बैण्ड को बजा रही थी। फिर अंततः 2009 में कांग्रेस-नीत यू.पी.ए. सरकार ने पहली से आठवीं कक्षा के बच्चों या यूं कहें कि 6 से 14 वर्ष तक की आयु वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार का एक्ट विधिवत पास कर दिया। साथ ही सरकार ने उनके लिए बेरोकटोक पास करने की नीति का सख्ती से पालन करना अनिवार्य कर दिया। उसका उल्लंघन करना दण्डनीय अपराध माना जाएगा। इस तरह से कानूनी वैधता देते हुए इस नीति को लागू करने की अधिकारिक प्रक्रिया पूरी की गई। इस दौरान कुछ अन्तराल के लिए केन्द्र में चाहे बीजेपी-नीत सरकार रही हो या राष्ट्रीय या क्षेत्रीय पार्टियों द्वारा चलायी जाने वाली राज्य सरकारें रहीं हों जैसे कि पश्चिमी बंगाल में तृणमूल कांग्रेस की सरकार है, इस सरकार सहित कोई भी सरकार इस नीति का पालन करने से कतराई नहीं। अब मोदी-नीत वर्तमान बीजेपी सरकार भी इससे कुछ अलग नहीं कर रही। इससे साफ जाहिर है कि सब सरकारें उन्हीं नीतियों को क्रियान्वित कर रही हैं जिनका मकसद देखने में एक अदृश्य बैण्ड मास्टर, शासक पूँजीपति वर्ग के हित साधना है।

बेरोकटोक पास की नीति के पैरोकार लचर दलीलों का सहारा लेते हैं, हकीकत को नकारते हैं

इस नीति के व्याख्याता जनता को यह विश्वास करवाना चाहते हैं कि परीक्षा के डर से, फेल होने के डर से, अगली कक्षा में न चढ़ाये जाने से छात्र बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। ऐसे में उनके पढ़ाई के साल बढ़ जाते हैं। इससे मासूम बच्चों के खिलते दिलों पर अतिरिक्त बोझ पड़ जाता है। इसलिए छात्रों को इस डर और बोझ से निजात दिलाने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि उन्हें बिना फेल किए स्वतः अगली कक्षा में चढ़ा दिया जाए। उनके इस अजीबो-गरीब सिद्धान्त में कपटपूर्ण बातों पर लोग कहीं बावेला न मचा दें, यह खतरा भांप कर वे कुछ टोटके देते हैं, वे वार्षिक परीक्षा को हटाकर सतत समग्र मूल्यांकन (सी.सी.ई.) के नुस्खे देते हैं। यह रोग का निदान किये बिना ही इलाज का तरीका बताने की एक नायाब मिसाल है! कोई इसके विषय में पूछ सकता है–क्या यह भोलापन है या पाखण्ड! सतत समग्र मूल्यांकन(सी.सी.ई.) कुछ देशों में कारगर हो भी सकता है जहाँ पर पर्याप्त बुनियादी ढांचा मौजूद है। पर हमारे देश में जहाँ इतनी विविधताएं हैं, छात्र भिन्न-भिन्न सामाजिक और व्यक्तिगत समस्याओं वाली अलग-अलग सामाजिक पृष्ठभूमियों से आते हैं, ऐसा एक देश जिसके हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार का बोलबाला है, कदम-कदम पर बेईमानी है, शिक्षण संस्थानों तक में तुच्छ स्वार्थों का टकराव होता है, एक ऐसा देश जहाँ बहुत सारे स्कूल निहायत कम टीचर-छात्र अनुपात से चलाए जाते हैं, जहाँ पर पर्याप्त संख्या में टीचर और बुनियादी सुविधाएं मुहैया नहीं हैं, ऐसी स्थिति में 'ग्रेड प्रणाली' और सी.सी.ई. के सतत आंतरिक मूल्यांकन पर पूर्ण निर्भरता हमेशा चैकिंग में अलग-अलग मानदण्डों की ओर ले जाएगी और दोषपूर्ण मूल्यांकन, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद की ज्यादा से ज्यादा गुंजाइश रहेगी। इस तरह से प्राप्त हुए परिणामों को भी किसी व्यापक दायरे में विश्वसनीय तौर-तरीका नहीं माना जाएगा। अन्ततः यह भी बेरोक-टोक पास की पद्धति की ओर ही ले जाएगा।

अगला मामला यह है कि परीक्षा के आधार पर पहली कक्षा से दूसरी कक्षा तक, एक स्तर से दूसरे स्तर पर जाना मूल्यांकन का कहीं ज्यादा बड़ा एक प्रमाणीकरण है, जो लम्बे समय से अजमाया हुआ तरीका है, जिसे न केवल शिक्षण संस्थानों में बल्कि बाद में जीवन के हर क्षेत्र में और हर पेशे में स्वीकारा गया है। सामान्यतया छात्र, शिक्षक और अभिभावक इसके महत्व को समझते हैं और परीक्षा के औचित्य को मानते हैं। छात्र जांच-पड़ताल किये जाने की प्रक्रिया से कतराते नहीं हैं बशर्ते उन्हें सही मायने में शिक्षित करने के उद्देश्य से अच्छी तरह पढ़ाया गया हो, बशर्ते बुनियादी ढांचागत सुविधाएं (क्लासरूम, शौचालय खास तौर पर छात्राओं के लिए, खेल का मैदान, पुस्तकालय की सुविधाएं, घरों से स्कूल आने-जाने की पर्याप्त सुविधाएं) उपलब्ध हों, बशर्ते शिक्षक-छात्रों के बीच पारस्परिक क्रिया आत्मीयतापूर्ण हो। क्या बेरोकटोक पास करने की नीति के प्रवक्ता इसके खिलाफ साक्ष्य में कोई और मिसाल दे सकते हैं?

अगर छात्र परीक्षा से नफरत करते हैं तो इसका जिम्मेदार कौन है?

हाँ, छात्रों को परीक्षा से डर लग सकता है। कब और क्यों? असल में उन्हें खुद क्या देखने को मिलता है? स्कूल-कॉलेजों में सैकड़ों पद खाली पड़े हैं, अकसर बिलकुल बेकार कारणों से शिक्षण प्रक्रिया में आये दिन रुकावटें डाली जाती हैं, परीक्षा के लिए पाठ्यक्रम अपने आप में बड़ी हद तक अवैज्ञानिक और बोझिल हैं, जिसे पूरा न पढ़ा पाने से तकलीफें और बढ़ जाती हैं, पुस्तकालयों का ध्यान नहीं रखा जाता है या किताबों की उनमें कमी है, लेबोरेट्री पर्याप्त साजोसामान से वंचित हैं, सर्व शिक्षा अभियान(एसएसए) और डीपीईपी इत्यादि दिखावे के सब बड़े-बड़े प्रोजेक्टों के बावजूद बुनियादी ढांचा तेजी से चरमराता जा रहा है, ॲथोरिटियां किसी तरह के असंतोष की आवाज बुलंद करने वाले शिक्षकों और छात्रों पर डण्डा चलाती हैं, हर बड़े राजनीतिक दल अपने तुच्छ दलगत स्वार्थों को पूरा करने में छात्र-अध्यापक-कर्मचारियों की ताकतों का इस्तेमाल करते हैं, इस प्रकार कैम्पस, शिक्षण संस्थानों का वातावरण, यहां तक कि शैक्षणिक कार्य न चाहते हुए भी विषाक्त हो जाता है, राजीव गांधी के प्रधानमंत्रीत्व काल में लाई गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई'86) के बाद से ही शिक्षा में व्यापक व्यवसायीकरण-निजीकरण को बढ़ावा दिया गया है, जिसने अध्यापकों के साथ-साथ छात्रों में भी नैतिक मूल्यबोधविहीन खुदगर्ज व्यावसायिक नजरिया पनपाने के लिए आग में घी डालने का काम किया है; बढ़ती हुई बेरोजगारी, उद्योगों व अर्थव्यवस्था में जानलेवा ठहराव, कमरतोड़ महंगाई, स्कूलों में चरमराते बुनियादी ढांचे और समाज में रसातल में जाते हुए सांस्कृतिक और नैतिक पतन के कारण उनके बच्चों के भावी अंधकारमय भविष्य की कड़वी सच्चाई से रूबरू अभिभावक उसी चूहा दौड़ का हिस्सा बन जाते हैं कि किसी भी तरह उनके बच्चे परीक्षा पास कर जाएं और इस तरह वे अनुचित रास्ते अपनाने तक में उनकी मदद करते हैं।

ये सब और इसी तरह के कई अन्य कारक छात्रों की पढ़ाई को निरुत्साहित और कुचल देते हैं और इस तरह उनमें परीक्षाओं के प्रति नफरत पैदा कर देते हैं। पर इस सब के लिए कौन जिम्मेदार है? क्या केवल छात्रों, अध्यापकों और अभिभवकों के द्वारा इन समस्याओं से पार पाना संभव है? कौन शिक्षकों को नियुक्त करता है और कौन नहीं? कौन स्कूलों में उपलब्ध एक अकेले या चंद एक शिक्षकों को भी हजारों तरह के गैरशिक्षण सांसारिक कामों में लगाए रखता है? जिनमें बच्चों के लिए मिड डे मील के भोजन का इंतजाम करना, यहां तक कि बनाना भी, स्कूलों में वापस लाने के लिए बच्चों के पीछे दौड़-धूप करना, दैनिक खाते और रिपोर्ट बनाना, क्षेत्र की जनगणना का अभियान चलाना, समय-समय पर चुनावी ड्यूटी करना और न जाने क्या-क्या काम शामिल हैं? किसने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संदर्भ में यह बयान दिया कि 'शिक्षा एक अद्भुत निवेश है जिस पर अत्यधिक लाभ के प्रतिफल प्राप्त होते हैं क्यों कि अभिभावक शिक्षा के लिए कमरतोड़ खर्चा करते हैं ताकि उनके बच्चे पढ़ सकें'? किसने लोगों के दिल-दिमाग में कूट-कूट कर भरने के लिए यह ढिंढोरा पीटा कि शिक्षा को अब बाजार की मांग पूरी करनी होगी, यह भूल कर कि मनुष्य के चरित्र-निर्माण में शिक्षा की भूमिका है? किसने यह कहा कि अब से सरकार शिक्षा पर ध्यान नहीं देगी और किसने स्कूल-कॉलेजों के लिए धनराशि में कटौती की, किसने उनके बुनियादी ढांचे को बर्बाद होने दिया और उन्हें 'स्वयं वित्तपोषित ढंग' अपनाने और शिक्षण संस्था चलाने के लिए प्राइवेट हाथों से धन मांगने के लिए मजबूर किया? किसने डीपीईपी परियोजना लागू करने की इजाजत दी और शुरू की जो खुले आम यह ऐलान करती है कि अब बच्चों को पढ़ाने की जिम्मेदारी माँ-बाप की है न कि सरकार की? किसने बेशर्मी से दो तरह की शिक्षा देने का विभेदकारी सिद्धान्त अपनाने की मंजूरी दी एक, विशाल जनसमुदाय के गरीब परिवारों के आम बच्चों के लिए न्यूनतम शिक्षा का स्तर (एमएलएल) और दूसरा, थोड़े से सुविधाप्राप्त अमीर परिवारों के परिवारों के बच्चों के लिए शिक्षा का इष्टतम स्तर(ओएलएल) ताकि वे विश्व स्तरीय प्रतियोगिता का मुकाबला करने में काफी सक्षम अच्छी तरह सजे-संवरे व्यक्ति बन सकें?

यह और बताया जा सकता है कि इस नीति की सबसे पहले प्रख्यात पक्षधर सीपीआई(एम)-नीत पश्चिम बंगाल सरकार ने इम्तिहान खत्म करने के अपने एजेण्डे के हिस्से के तौर पर जब राज्य स्तर के प्राथमिक विद्यालयों में होने वाली वजीफे की परीक्षा को हटाया तो इस निर्णय के खिलाफ कदम के तौर पर हमारी पार्टी एस.यू.सी.आई.(सी) ने परीक्षाएं लेने के लिए अग्रणी शिक्षाविदों और अध्यापकों की संयुक्त जनसमिति बनाने की पहलकदमी की। इस प्रयास में आशातीत सफलता प्राप्त हुई। कुछ वर्षों में लाखों छात्रों ने उत्साहपूर्वक परीक्षा में भाग लिया, इसके कड़े विरोध और शासक दल के समर्थकों की धमकियों के बावजूद भी, स्कूलों में अध्यापक और अभिभावक बहुत बड़ी सहायता देने में आगे आए, प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक परीक्षक बने और कॉलेजों और विश्वविद्यालयों के शिक्षक सुपरवाईज़र और मुख्य परीक्षक बने और उन्होंने ये सेवा स्वैच्छिक रूप से निःशुल्क उपलब्ध कराई थी। जनता ने बेझिझक सहयोग प्रदान किया और बहुत से दान दाताओं ने वजीफे की धनराशि दी। क्या ये तथ्य और उदाहरण इस बात के अमिट साक्ष्या नहीं हैं कि लोगों का परीक्षाओं और इनके सार्थक लक्ष्य की तरफ सकारात्मक रवैया है।

ये और ऐसे ही और सवाल एक ही जवाब पर पहुँचते हैं। यह सरकार ही है जो इन सबके लिए जिम्मेदार है। राष्ट्रीय या क्षेत्रीय, दक्षिणपंथी या वामपंथी कहलाने वाली किसी भी मुख्य संसदीय पार्टी की सरकार रही हो, सब मिलजुलकर शासक वर्ग के राजनैतिक मैनेजर का काम कर रही हैं और उन्होंने आजादी के बाद के इन सालों में शिक्षा क्षेत्र को तबाह कर दिया है। उन्होंने छात्रों के उत्साह और जैसी शिक्षा चाही थी उस शिक्षा के सपनों को चूर-चूर कर दिया है। उन्होंने जो अध्यापक समाज के सही मायने में भावी 'इन्सान' बनाने के लिए शिक्षा के नेक पेश सें जुड़े थे, उनको भी निराश कर दिया है और अभिभावकों की आशाओं पर पानी फेर दिया जो अपने बच्चों के बारे में यह उम्मीद करते थे कि वे चरित्रवान, अपने जीवन-संघर्ष का सामना करने में साहस और आत्मविश्वास से लैस होकर बड़े होंगे और विवेकशील होंगे। और अब उन सब बुराइयों को भूलकर जो उन्होंने खुद पैदा की हैं सरकारें उन्हें परीक्षा के बोझ और डर से निजात दिलाने वाली उनकी शुभचिंतक, छात्र-हितैषी होने का दिखावा कर रही हैं।

बेरोकटोक पास की नीति शिक्षा के स्तर व गुणवत्ता में तेजी से गिरावट लाती है–शासक पूँजीपति वर्ग की एक साजिश

जहाँ तक तथ्यों का सवाल है परीक्षा के बिना छात्रों के पास यह जाँचने की कोई गुंजाईश नहीं होती कि उन्होंने कितना सीखा है, क्या कमियां हैं और कितना अन्तर है और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है। इसके विपरीत, साल-दर-साल अपने आप कक्षाओं में बेरोकटोक

(शेष पृष्ठ 3 पर)

सरकारी प्राइमरी स्कूलों में बेरोकटोक पास नीति...(पृष्ठ 2 का शेष)

चढ़ाने से पढ़ाई बिल्कुल निरर्थक हो गई है। छात्रों के लिए हँसी उड़ाने की एक कवायद बन कर रह गई है। इसने बच्चों में खुद का विकास करने की चाह को ही खत्म कर दिया है। अध्यापकों के पास भी यह पता लगाने का कोई चारा नहीं बचा कि छात्रों को उनके द्वारा पढ़ाया पाठ कहाँ तक समझ आ रहा है या नहीं, कौन से छात्रों पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है और कौन से छात्रों में प्रतिभाशाली बनने की संभावनाएं ज्यादा हैं। यह किसी भी अध्यापक की न केवल पहलकदमी पर ठण्डा पानी फेर रहा है बल्कि दिनोंदिन, महीनों, सालोंसाल के लिए एक व्यर्थ निरर्थक कवायद करने के लिए हतोत्साहित करने वाला है। अपने कर्त्तव्यों और जिम्मेदारियों से जी चुराने के आसान तरीके ढूंढ़ने का शिक्षक समुदाय में कम प्रतिबद्ध सदस्यों के लिए रास्ता खोल दिया है। इसके अलावा, जैसे कि जिक्र किया जा चुका है कि शिक्षकों को हर तरह के सांसारिक कामों में लगा देने और छात्रों और शिक्षकों में बाजार-केन्द्रित व्यापारिक दृष्टिकोण पैदा कर देने ने छात्रों और शिक्षकों में उदासीनता, अयोग्यता, निराशा-हताशा और कुटिलता बढ़ा दी है। इस तरह से पढ़ना पढ़ाना चलता रहता है, पर दोनों में से एक में भी वास्तव में इसे सार्थक या सोद्देश्यपूर्ण कवायद बनाने के लिए, शिक्षण की प्रक्रिया को छात्रों को सही ढंग से ज्ञान से लैस करने की प्रक्रिया बनाने या सीखने की प्रक्रिया को सत्यवादिता और गम्भीरतापूर्वक ज्ञानार्जन के लिए बनाने के लिए पर्याप्त मात्रा में इच्छा या गम्भीरता नहीं है। इस तरह पूरी शिक्षा नीति में बद्धमूल बहुत से ऐसे कारक हैं जो शिक्षा के स्तर और गुणवत्ता को लगातार गिराते जा रहे हैं। बेरोकटोक पास नीति भी शिक्षा के इस पतन की गति तेज करने का जरिया रही है और पूरे देश की स्कूली शिक्षा का सर्वनाश कर रही है, जिस बात से अब देश के शासक भी मुकर नहीं सकते हैं।

पर शासक पूँजीपति वर्ग, बैण्ड मास्टर बेरोकटोक पास की नीति के लिए इतने सरगर्म क्यों हैं? यह इसलिए है कि यह नीति इसकी जघन्य वर्ग-जरूरत को पूरी करती है। कहीं इसके निर्मम शोषणमूलक वर्ग शासन के खिलाफ सचेत विरोध की आवाज न उठ खड़ी हो जाए, इसीलिए संस्थागत सीखने के स्तर को क्षीण करके और औपचारिक शिक्षा तक मेहनतकश जनसाधारण की पहुँच में कटौती करके लोगों को अनपढ़ रखने, सोचने की शक्ति से महरूम रखने की पूँजीपति वर्ग की लगातार कोशिश रही है। इसके अलावा, चूँकि पूँजीवादी व्यवस्था, अपने चलन के नियम के कारण ज्यादा से ज्यादा गहरे और न सुलझाए जा सकने वाले बाजार संकट में धंसती जा रही है, इसलिए शिक्षितों में भी बेरोजगारी दिन दुगुनी रात चौगुनी बढ़ रही है। इसलिए शासक वर्ग की साजिश रही है कि उच्च शिक्षा में प्रवेश के अवसरों को घटा कर शिक्षित बेरोजगारों की संख्या कम कर दी जाए। इसे बताने की कोई खास जरूरत नहीं है कि उच्च शिक्षा में और सभी प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं से पास-फेल प्रणाली चलती है। ट्यूशन फीस बेतहाशा बढ़ने से और पास-फेल पद्धति खत्म कर देने से छात्र शिक्षा में प्रवेश नहीं कर पाते हैं। उनको उच्च शिक्षा में जाने से रोकना आसान हो जाता है। क्योंकि स्कूली पाठ्यक्रम को ठीक से न पढ़ने के कारण, जिसका सबूत परीक्षाएं पास करने से मिलता है, ज्यादातर छात्र उच्च शिक्षा में प्रवेश लेने की पर्याप्त योग्यता का मानसिक अभाव खुद में पाते हैं। यहाँ पर हम भेदभाव का एक स्पष्ट मामला देखते हैं। बेरोकटोक पास की नीति के द्वारा शिक्षा के स्तर में लाई गई जबरदस्त गिरावट से अमानवीय रोबोट मानवों की आबादी तैयार कर दी गई है जिन्हें सामाजिक चेतना, सामाजिक दायित्वबोध पैदा करने वाली, संक्षेप में कहें तो, मानव निर्माण करने वाली, चरित्र निर्माण करने वाली शिक्षा की भूमिका परायी लगती है। बेरोकटोक पास करने की नीति के पीछे कुल मिला कर यही है पूँजीपति वर्ग की साजिश। स्वाभाविक है कि चुनाव-सर्वस्व राजनीति करने वाली हर रंग के झण्डे वाली पार्टियों जो सत्ता में आने या सत्ता के गलियारों में दृश्यमान बनी रहने के लिए शासक वर्ग का आशिर्वाद पाना चाहती हैं, वे सब शासक वर्ग की इस साजिश को साकार करने के लिए बेरोकटोक पास की नीति का खुशी-खुशी समर्थन किये बिना नहीं रह सकती हैं।

केवल क्रान्तिकारी पार्टी ने ही बेरोकटोक पास की नीति के खिलाफ बीड़ा उठाया; वरिष्ठ प्रबुद्ध महानुभाव इसे नेतृत्व दें

इससे यह साफ जाहिर है कि जो राजनैतिक पार्टी शासक वर्ग की धुन पर नहीं नाचती, जो सत्ता-सुख और अपने लाभ के लिए गंदी बुर्जुआ राजनीति का हिस्सा नहीं है, केवल वही शिक्षा के अवसरों को कम करने और शिक्षा के स्तर को गिराने की शासक वर्ग की घिनौनी साजिश का पर्दाफाश करने का साहस कर सकती है। केवल वही पार्टी राजनीति को उच्च हृदयवृत्ति के रूप में देखती है जो किसी व्यक्ति को समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने और इसके द्वारा समाज को मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण से मुक्त करने का जिम्मा लेने के लिए प्रेरित करती है। यह ऊँची संस्कृति को जन्म देती है और तर्कशील वैज्ञानिक ज्ञान से समस्त जनता को जागरूक करती है। अत: जब वोट-सर्वस्व राजनीति करने वाली सभी संसदीय पार्टियाँ बेराकटोक पास करने की सर्वनाशी शिक्षा नीति को बढ़चढ़ कर समर्थन देने में लगी हुई थी, तब इस युग के अन्यतम मार्क्सवादी चिन्तनकार शिवदास घोष द्वारा संस्थापित भारत के सर्वहारा वर्ग की सही क्रान्तिकारी पार्टी एस.यू.सी.आई.(सी) ने शिवदास घोष की शिक्षाओं से लैस होकर, सभी लोगों के लिए नि:शुल्क, धर्म-निरपेक्ष वैज्ञानिक शिक्षा के हित-उद्देश्य को बुलंद करने के लिए संघर्ष शुरू किया था। इसके वैचारिक, संगठनात्मक ढांचे की रचना करते हुए और पार्टी और इसके विभिन्न जन संगठनों एवं जाने-माने शिक्षाविदों, अध्यापकों, छात्रों, बुद्धिजीवियों और शिक्षाप्रेमी मेहनतकश जनता के सभी तबकों के लोगों, जिनके लिए अपने बच्चों के लिए शिक्षा सदा एक सपना और अभिलाषा है, को इसमें शामिल करते हुए पूरे देश में शिक्षा बचाओ आन्दोलन की अगुआई की थी। जिस दिन सरकार ने इस फैसले का ऐलान किया था उसी दिन से इन भ्रामक दलीलों और इसके पीछे छिपे मन्सूबे का भण्डाफोड़ करते हुए पास-फेल प्रणाली के उन्मूलन के घातक फैसले को फौरन मन्सूख करने की इस आन्दोलन के मंच से आवाज बुलंद की थी। इस ऐतिहासिक संघर्ष का सार संक्षेप में यूं दिया जा सकता है।

स्कूल-कॉलेजों में साहित्य और भाषा शिक्षण के महत्व को कम करने और शिक्षण संस्थानों की स्वायतत्ता में कमी करने की पश्चिमी बंगाल की सीपीआई(एम)-नीत वाममोर्चे की सरकार की नीतियों के खिलाफ 1970 के दशक से ही एस.यू.सी.आई.(सी) ने राज्य के जाने-माने बुद्धिजीवियों को लेकर आन्दोलन छेड़ दिया था। इसी उद्देश्य से सन 1981 से जन कमेटियाँ बनाई गई थी। शुरू में शिक्षा संकुचन विरोधी और स्वाधिकार रक्षा समिति थी। छात्र संग्राम समिति भी बनी थी जिसने छात्र-नौजवानों को संगठित किया था। अन्तत: जब सरकार ने प्राथमिक स्तर पर अंग्रेजी पढ़ाना और पास-फेल प्रणाली को खत्म करने का प्रस्ताव रखा और ऐलान कर दिया तो आन्दोलन की बागडोर संभालने और तेज करने के लिए ऑल बंगाल सेव एजूकेशन कमेटी बनी थी। सुकुमार सेन, आर.के. दासगुप्ता, शैलेश दे, प्रमेन्द्र मित्र, प्रमथ नाथ विशी, सत्येन सेन, मनोज बसु, डॉ. निहार रंजन राय, शंकर प्रसाद मित्र, प्रतुल गुप्ता, संतोष कुमार घोष, वाणी राय, सुबीर बसु राय, माणिक मुखर्जी, और अन्य अनुभवी अग्रणी शिक्षाविद्, साहित्यकार, लेखक, पेशेवर अध्यापक आम लोगों के साथ कंधे से कंधा मिलाने के लिए आगे आये, उनमें से बहुत सारे अपने जीवन में पहली बारं शिक्षा के हित-उद्देश्य के लिए सड़कों पर उतरे थे। उनमें से भाषाविद-शिक्षाविद-साहित्यकार सुकुमार सेन ने यथास्वभाव अपने अंदाज में शिक्षा में परीक्षा का बड़ा भारी महत्व बताया। कलकत्ता की सड़कों पर धरने में बैठे हुए लोगों को उन्होंने थोड़े से शब्दों में बताया कि परीक्षक जब छात्र की उत्तर पुस्तिका जाँचता है तो समझ जाता है कि उसको पढ़ाए गए पाठों को वह छात्र या छात्रा कहाँ तक समझ पाया है या पायी है। जिससे शिक्षक यह जाँच सकता है कि 'वह अध्यापक या अध्यापिका अपने छात्रों को पढ़ाने में सफलतापूर्वक परीक्षा पास हुआा है/हुई है या फेल।' इस तरह परीक्षा सिर्फ छात्रों के लिए ही नहीं होती बल्कि अध्यापकों के लिए भी होती है।

आन्दोलन ने रैलियाँ, धरने, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, हस्ताक्षर अभियान और ऐसे कई और रूप अख्तियार किए जिनमें जीवन व समाज के विभिन्न तबकों के लोग, छात्र, महिलाएं, बुद्धिजीवी, यहाँ तक कि किसान-मजदूर भी शामिल हुए थे। राज्य के बहुत बड़े दायरे के प्रबुद्ध लोगों के नेतृत्व के कारण आन्दोलन के तेज होने से सरकार को 1992 में अशोक मित्र कमीशनं बिठाना पड़ा। पर यह असल में आँखों में धूल झोंकना ही था क्योंकि इसकी सिफारिशें एन.पी.ई'86 की प्रतिलिपि ही थीं। ये अन्तर्विरोधों से भी भरी हुई थीं। धारा 3(11) पृ.40 में कमीशन की रिपोर्ट में यह स्वीकार किया गया कि पास-फेल पद्धति हटाने से शिक्षा में अराजकता फैल गई, खास तौर में सीखने-पढ़ाने को लेकर और प्राथमिक शिक्षा जो कुछ बची-खुची थी, वह भी बर्बाद हो गई। इसके बावजूद इसने सिफारिश की कि पास-फेल पद्धति के उन्मूलन को बरकरार रखा जाए।

सरकार के उदासीन, टोल-मटोलने वाले, अड़ियल और यहां तक कि धोखधड़ी भरे रवैये को भांप कर लोगों का प्राइमरी स्कूल स्तर से पास-फेल प्रणाली और अंग्रेजी शिक्षण को हटाने को लेकर यह प्रतिरोध धीरे-धीरे बड़े से बड़ा होता गया। 1996 में 17 दिसम्बर को ऑल बंगाल सेव एज्यूकेशन कमेटी(ए.बी.एस.ई.सी.) 1 करोड़12 लाख हस्ताक्षरों सहित प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो. सुशील कुमार मुखर्जी, प्रो. अरविन्दनाथ बसु, गीतानाथ गांगुली, प्रो. सुनन्दा सान्याल, सुबीर बासु राय आदि के नेतृत्व में एक विशाल डेपुटेशन मुख्यमंत्री के पास लेकर गई। 1997 में 10 मार्च को ए.बी.एस.ई.सी. ने छात्र-नौजवानों की एक विशाल रैली का आयोजन किया। 1998 में 3 फरवरी को देश ने शिक्षा बचाने के लिए एक राजनीतिक पार्टी—वह भी किसी और के नहीं, बल्कि देश की एकमात्र क्रान्तिकारी पार्टी के आह्वान पर बंद की अद्वितीय घटना घटते देखी। यह बन्द पूरे राज्य में पूरी तरह से सफल हुआ था। सरकार को उसके अड़ियल और स्वेच्छाचारी पोजीशन से झंकाने के लिए जीवन के हर क्षेत्र से लोग, मेहनतकश, बुद्धिजीवी, नौजवान, बूढ़े आदमी-औरतें, सब दृढ़ संकल्प के साथ उठ खड़े हुए थे। बिमल दासगुप्ता सरीखे स्वतंत्रता आन्दोलन के पुराने अनुभवी क्रान्तिकारियों सहित प्रदेश की जानी-मानी हस्तियों ने इस आंदोलन और शिक्षा के हित-उद्देश्य के लिए तहेदिल से अपने अनुमोदन और समर्थन का इजहार करते हुए अपने संदेश भेजे।

एस.यू.सी.आई.(सी) द्वारा शुरू और संगठित किया गया 19 वर्षों तक चला जन-संघर्ष अंतत: शानदार तरीके से सफल हुआ। सरकार अपने किले से नीचे उतरी और एक व्यक्ति वाले आयोग के गठन के लिए मान गई और अंग्रेजी को दोबारा प्राथमिक स्तर पर लागू किया लेकिन फिर भी पास-फेल की प्रणाली को समाप्त करने से मुँह चुराया। पश्चिम बंगाल में इस दिग्दर्शक आन्दोलन ने एक बार फिर जनशक्ति की अजेयता को प्रतिष्ठित कर दिया। इस तरह के आन्दोलन, खासकर एन.पी.ई. '86 के खिलाफ आन्दोलन की कड़ी के रूप में कई आन्दोलन पार्टी द्वारा किये गये। एक पर एक सत्ता में आई केन्द्र सरकारों द्वारा अपना राजनैतिक ब्राण्ड अलग होने के बावजूद भी उन्होंने वे ही नीतियाँ अपनाई। उनके द्वारा अमल में लाई गई इस नीति के खिलाफ, देश के दूसरे कई राज्यों में भी आन्दोलन किये गये। स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों के शिक्षकों और छात्रों को लेकर शुरूआती दौर में 1987 में 12-13 अक्टूबर को दिल्ली में अखिल भारतीय टीचर्स रैली और कन्वेन्शन किया गया। फरवरी 1989 में ऑल इण्डिया सेव एजुकेशन कमेटी(एआईएसईसी) के बनाए जाने के बाद, इसी कमेटी के द्वारा आन्दोलन चलाया गया। ए.आई.एस.ई.सी. ने मई 1989 में एक ठोस और रचनात्मक विरोध के प्रतीक के तौर पर *टूवार्ड्स ं पीपल्स पॉलिसी ऑन एजुकेशन: एन अल्टर्नेटिव टू एन.पी.ई. '86* (वैकल्पिक शिक्षा नीति) का मसौदा तैयार किया। सुप्रीम कोर्ट के जज, जस्टिस वी.आर. कृष्ण अय्यर, मशहूर वैज्ञानिक व शिक्षाविद, -उपकुलपति सुशील कुमार मुखर्जी, रांची विश्वविद्यालय के डा. एन. प्रसाद और कई अन्य जानी-मानी हस्तियाँ आन्दोलन के अलग-अलग दौर में नेतृत्वकारी भूमिका में रही।

(शेष पृष्ठ 4 पर)

4 R.N.I. No.- 43022/85
P.R.No.-DL(C)-01/1123/2015-2017
Posting at IPMBC on 7–8 and 22–23 Fortnightly, Date of Printing : 5 July, 2015

सर्वहारा दृष्टिकोण

7 जुलाई, 2015

सरकारी प्राइमरी स्कूलों में बेरोकटोक पास नीति...

(पृष्ठ 3 का शेष)

देश के विभिन्न भागों में स्थानीय स्तरों पर भी शिक्षा बचाओ समितियाँ बनाई गई जिससे देश भर में आन्दोलन को तेजी मिली। विभिन्न राज्यों में छात्रों, अध्यापकों और अभिभावकों के बीच आन्दोलन को आगे बढ़ाने में एआईडीएसओ ने महत्त्वपूर्ण नेतृत्वकारी भूमिका निभाई, जिससे लोग यह समझ जाएं कि सरकारी प्राइमरी स्कूलों में शिक्षा के स्तर और गुणवत्ता में भारी गिरावट आने का कारण क्या है। बेरोकटोक पास करने की नीति को समाप्त करने की जरूरत दिन ब दिन बढ़ती जा रही है, इससे सम्बन्धित राज्य सरकारों पर इसे खत्म करने का दबाव बढ़ता जा रहा है।

इस नीति का प्रतिरोध करने और इसे वापस कराने के लिए लोगों को उठ खड़े होने की जरूरत है

सभी प्रमुख राजनैतिक पार्टियाँ जो भी सत्ता में रही हैं उन्होंने जहाँ तक उनकी पार बसाई बेरोकटोक पास करने की नीति को लागू करने के विनाशकारी प्रयासों में अपना योगदान दिया है। आजकल बीजेपी, जो राजनैतिक ताकत भारतीय प्राचीन धरोहर, शान और परम्परा का ढिंढ़ोरा पीटती है, वह भी इसी रास्ते पर चल रही है। हमारी सभी आशंकाओं को सही ठहराते हुए यह साबित कर रही है कि बेरोकटोक पास की नीति हमारी शिक्षा प्रणाली में अकल्पनीय संकट ला दिया है, हमारी शिक्षा प्रणाली की उस नींव को हिला देने की ओर प्रवृत्त रही है जिसे हजारों निःस्वार्थी लोगों, शिक्षाविदों, अध्यापकों, अभिभावकों और अन्यों ने मिलकर खड़ा किया था, अपनी विद्वता और शैक्षणिक प्रतिभा के लिए जानी जाने वाली हमारे देश की शानदार परम्परा को मटियामेट करने की ओर प्रवृत्त रही है।

केन्द्र में कांग्रेस-नीत यू.पी.ए. के शासनकाल में, आर.टी.ई. 2009(मानव संसाधन विकास मंत्रालय की स्टैण्डिंग कमेटी की विभाग-सम्बन्धित 253वीं रिपोर्ट) के क्रियान्वयन की समीक्षा रिपोर्ट जो लोक सभा में 26 अप्रैल, 2013 को पेश की गई थी, उसमें यह कहते हुए गहरी चिन्ता व्यक्त की गई थी, ''कमेटी यह महसूस करती है कि छात्र में मेहनत करने की या सीखने की इच्छा के लिए उत्साह नहीं होगा जब उसे पता है कि अगली कक्षा में बेरोकटोक पहुँचने की गारण्टी है।'' इसने दोटूक सुझाव दिया था कि पास-फेल पद्धति को दोबारा प्राथमिक स्कूलों में लागू किया जाए। इस वर्ष भी वर्तमान में प्रस्तावित नई शिक्षा नीति पर केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय और अलग-अलग राज्यों के प्रतिनिधियों के बीच दिन भर चली बैठक में एक पुरजोर अपील की गई और जोरदार मांग रखी गई कि 8वीं कक्षा तक बेरोकटोक पास करने की नीति को खत्म किया जाए।

आम तौर पर शिक्षा के घटिया स्तर के बारे में चिन्ता थी। कुछ प्रतिनिधि बेबसी से ये कह रहे थे, ''हम बच्चों को सातवीं तक फेल नहीं करते और वे नवीं कक्षा पास नहीं कर सकते।'' दूसरे प्रतिनिधि भी उसी तेवर में इसी तरह की आवाज उठा रहे थे। इससे पता चलता है कि हमारी पार्टी का छात्र संगठन एआईडीएसओ और अखिल भारतीय शिक्षा बचाओ नामक जन कमेटी के द्वारा चलाये जाने वाले संघर्ष ने विशाल जनमत बनाने में सफलता हासिल की जिसने सरकारों पर दबाव डाला कि वे बेरोकटोक पास करने को नीति के अनर्थकारी परिणामों के बारे में दो बार सोचें। साफ दिखाई देने वाले इस दबाव का असर यह है कि सरकार को तर्क और कारण की बुनियाद पर आधारित संगठित जन प्रतिवाद के चलते अपने कदम को वापिस लेनने की ओर प्रवृत्त होना पड़ रहा है।

ऐसी स्थिति में हम जनता से पुरजोर अपील करते हैं कि वे घरों से बाहर निकल कर देश व्यापी विशाल प्रतिरोधी आन्दोलन का निर्माण करें ताकि केन्द्रीय और राज्य सरकारों को इस विनाशकारी और विभेदकारी बेरोकटोक पास करने की नीति को वापिस लेने के लिए मजबूर कर दें और जनता को न्यूनतम मौलिक शिक्षा मिल सके।

मिड-डे-मील वितरण की जिम्मेदारी प्राइवेट एजेन्सी को देने की योजना का विरोध

मिड डे मील कार्य प्राइवेट एजेन्सी को देने के फैसले के खिलाफ सड़कों पर उतरीं मिड डे मील कार्यकर्ता

महेन्द्रगढ़ (हरियाणा) : मिड डे मील कार्यकर्ता यूनियन (सम्बन्धित ऑल इण्डिया यूटीयूसी के बैनर तले हजारों कार्यकर्ताओं ने 23 जून को शहर में प्रदर्शन किया और एसडीएम महेन्द्रगढ़ को शिक्षामंत्री के नाम अपनी मांगों का ज्ञापन सौंपा। हरियाणा के विभिन्न जिलों से आई मिड डे मील कार्यकर्ता स्थानीय यादव धर्मशाला में एकत्रित हुई। वहां हुई सभा के बाद शहर के मुख्य मार्गों से होते हुए जुलूस शिक्षामंत्री के आवास पर पहुंचा।

मिड-डे-मील बांटने की जिम्मेदारी प्राइवेट एजेन्सी को न देने, मिड डे मील वर्कर को चतुर्थ श्रेणी के सरकारी कर्मचारी का दर्जा देने, तब तक 15 हजार रुपये मासिक न्यूनतम वेतन देने, 20 बच्चों पर एक मिड डे मील वर्कर नियुक्त करने, स्कूलों में बढ़िया रसोई घर एवं पौष्टिक आहार का बंदोबस्त करने, छुट्टियों का मेहनताना देने, मिड डे मील वर्करों को सामाजिक सुरक्षा के दायरे में लाने, भविष्य निधि, ग्रेच्युटी, पेन्शन, जीवन बीमा, मुफ्त इलाज एवं अन्य सुविधाएं देने, साल में दो वर्दियां देने, स्वयं सहायता समूह को अलग से मेहनताना देने आदि मांगें ज्ञापन में शामिल थी। प्रदर्शनकारियों को ऑल इण्डिया यूटीयूसी के कॉ. राजेन्द्र सिंह, संयुक्त कर्मचारी मंच के महासचिव सूबे सिंह, मिड डे मील कार्यकर्ता यूनियन की नेत्रियों सुरस्ती, उर्मिला, राजबाला ने सम्बोधित किया।

उ.प्र में बिजली दर बढ़ोतरी के खिलाफ रोष प्रदर्शन

इलाहाबाद (उ.प्र.): हाल ही में उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा बिजली के मूल्यों में की गयी भारी वृद्धि के विरोध में एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) के कार्यकर्ताओं ने 20 जून को सिविल लाइन्स में सुभाष चौराहे पर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव का पुतला फूंका। इस अवसर पर आयोजित सभा में पार्टी के नेता-कार्यकर्ताओं ने अपना विक्षोभ प्रकट किया।

प्रदेश की सपा सरकार की घोर भर्त्सना करते हुए वक्ताओं ने कहा कि पहले से ही भीषण महंगाई के बोझ से दबी हुई जनता के ऊपर बिजली के मूल्यों में भारी वृद्धि करके सरकार ने जनता की कमर तोड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। इसने समाजवादी और जनहितैषी होने का दावा करने वाली राज्य सरकार की घोर हृदयहीनता और निर्दयता को भली भांति उजागर कर दिया है। बिजली दरों में हर स्तर पर, हर प्रकार से की जाने वाली यह भारी भरकम वृद्धि हैरतअंगेज है। शहरी, ग्रामीण, वाणिज्यिक उपभोक्ताओं, यहां तक कि गरीबी सीमा रेखा के नीचे आने वाले उपभोक्ताओं को भी नहीं बख्शा गया है। पिछले तीन सालों में पहले ही तीन-तीन बार वृद्धि कर चुकी सरकार के द्वारा की गयी इस ताजा वृद्धि ने सपा सरकार के घोर जन-विरोधी चेहरे को पूरी तरह से बेनकाब कर दिया है।

सभा का संचालन कॉ. कमलेश सिंह ने किया। इस अवसर पर पार्टी के जिला सचिव कॉ. एस. के. मालवीय, एन. के. मिश्र, एन. एल. गुप्ता, झरना मालवीय, विनोद सिंह यादव, ज्ञानशीला शर्मा, आशू ठाकुर, जेड. अहमद, रश्मि मालवीय, रामयश, घनश्याम मौर्य, विजय शंकर, दुर्गेश, संदीप, अक्षय आदि उपस्थित थे।

भूमि अधिग्रहण बिल के खिलाफ किसानों ने दिया धरना

रायसेन (म.प्र.) : भूमि अधिग्रहण अध्यादेश वापस लेने, पर्याप्त खाद-बीज व सस्ती बिजली उपलब्ध कराने और सभी गावों में सड़कों, बिजली-पानी, शिक्षा-चिकित्सा का प्रबंध करने आदि मांगों पर 17 जून को ऑल इण्डिया कृषक खेत मजदूर संगठन (एआईकेकेएमएस) की ओबेदुल्लागंज क्षेत्र कमेटी ने धरना दिया। प्रदर्शनकारियों को संगठन के राज्य अध्यक्ष कॉ. उमा प्रसाद, रामफल कीर, गजराज सिंह, दुर्गाप्रसाद चोकसे, रमेश आदि ने सम्बोधित किया। संगठन की ओर से एक ज्ञापन भी जिलाधीश, रायसेन को सौंपा गया।

"Print-line
Printed and published by Com. Satyawan on behalf of the Central Committee of the Socialist Unity Centre of India (Communist) and printed at M/s Balaji Offset Printers, 315/21, Shahzada Bagh, Daya Basti, Delhi and published at 3A/38, WEA, Satnagar, Karol Bagh, New Delhi-110005. Editor: Com. Satyawan, Member, Central Committee, SUCI(C)."

Email: sarvaharadrishtikon@gmail.com , sarvaharadrishtikon@yahoo.com फोन नं. : 011-25726631